www.researchvidyapith.com ISSN (Online): 3048-7331

Research Vidyapith International Multidisciplinary Journal

(International Open Access, Peer-reviewed & Refereed Journal)

(Multidisciplinary, Monthly, Multilanguage)

*** Vol-2* *Issue-10* *October 2025***

भारतीय न्याय व्यवस्था– वास्तविक स्थिति

शिवकुमारी यादव

शोध–छात्रा, (नेट), दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

प्रो0 रूसीराम महानन्दा

शोध निर्देशक, आचार्य, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

प्रस्तावना–

भारतीय संविधान विश्व का अकेला उदाहरण है जो विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों, भाषा, लिपियाँ तथा धर्म को समान मान्यता देते हुए, समस्त नागरिकों को समान अधिकार प्रदान करते हुए, एकता में बाँधें रखने का कठिन कार्य पिछले दशकों से करता आ रहा है। इसका प्रमुख कारण है संविधान की लोकतांत्रिक व्यवस्था, जिसमें सरकार के तीन प्रमुख अंगों व्यवस्थापिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका की सुदृढ़ रचनाएँ क्षेत्राधिकार, शक्तियाँ, अधिकार एवं दायित्व के साथ–साथ योग्यता को भी लिपिबद्ध कर दिया गया है जिसके तहत हमारे देश में व्यक्ति बड़ा नहीं है, बल्कि संविधान सर्वोच्च है। इसी के साथ 'विधि के शासन की स्थापना भारत में उन सभी आवश्यकता को पूरा कर दिया जो कि एक दृढ़ लोकतंत्र के लिए आवश्यक होता है। इस प्रकार भारत में सरकार तथा उसके प्रत्येक अंग संवैधानिक उपबन्धों के तहत अपना कार्य निष्पादन का उत्तरदायित्व भली भांति निर्वाह कर रहें हैं। जिसके कारण भारतीय लोकतंत्र सुदृढ़ होकर विश्व के समक्ष एक प्रबल लोकतांत्रिक देश के रूप में प्रस्तुत होता है।

भारतीय गणतंत्र का आधार सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय है जिस पर उच्चतम न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश जगमोहन रेड्डी ने कहा कि ''बिना न्याय के लोकतंत्र का कोई अर्थ नहीं है। लोगों को विचारों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के साथ–साथ विश्वास की स्वतंत्रता भी मिलनी चाहिए तो वहीं इसके अलावा लोगों को पद और अवसरों की स्वतंत्रता मिलनी चाहिए।''[1]

भारतीय न्यायिक प्रणाली दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र में सबसे मजबूत संस्थान है। इसका उद्देश्य निर्दोषों को न्याय दिलाना और दोषियों को दण्डित करना है फिर भी हजारों मामलों की लम्बित गम्भीर चिन्ता का विषय है। न्यायाधीशों और बुनियादी ढाँचें की कमी को उसी के प्रमुख कार्यो में से एक के रूप में रेखांकित किया गया है। लंबे समय की देरी के लिए निश्चित रूप से भ्रष्टाचार और परामर्श पक्षबिलंब अन्य प्रमुख कारण है। इस तरह की देरी को कम करने के लिए, अधिक जवाबदेही और पारदर्शी न्यायिक प्रणाली की आवश्यकता है। न्यायपालिका लोकतंत्र के महत्त्वपूर्ण स्तंम्भों में से एक है। भारतीय में न्यायिक प्रणाली में न्यायालय या अधीनस्थ न्यायालय और संवैधानिक न्यायालय शामिल है। संविधान भारत में कानून का सर्वोच्च स्रोत है और इस कानून को न्यायिक प्रणाली या उन न्यायालयों द्वारा लागू किया जाता है, जिन्हें भारतीय संविधान का प्रहरी माना जाता है। न्यायालय निर्णय ले सकता है और यह निर्णय नागरिकों के साथ–साथ सरकार के लिए भी बाध्यकारी है।

भारतीय संविधान में स्वतंत्रता के पश्चात् इकहरी न्यायिक व्यवस्था के प्रावधान उपबंधित किया है, जिसके शीर्ष पर उच्चतम न्यायालय है । सर्वोच्च न्यायालय को संविधान के संरक्षक के रूप में महत्व दिया गया है। भारतीय संविधान द्वारा भारत संघ के लिए स्वतंत्रत न्यायपालिका का प्रावधान है। स्वतंत्रता का अर्थ है कि सरकार के अन्य अंग विधायिका एवं कार्यपालिका किसी भी प्रकार से न्यायपालिका के कार्य में बाधा न पहुंचाए, सरकार के दूसरे न्यायिक निर्णयों में हस्तक्षेप न करें, तथा न्यायाधीश निष्पक्ष रूप से अपना निर्णय दें। यहाँ स्वतंत्रता का अर्थ स्वेच्छाचारिता या उत्तरदायित्व का अभाव नहीं है क्योंकि न्यायपालिका देश की लोकतांत्रिक शासन प्रणाली का हिस्सा है और देश के संविधान, लोकतांत्रिक प्रणाली

एवं जनता के प्रति जवाबदेही भी है ।

भारतीय न्यायपालिका की संरचना–

भारतीय संविधान में एकीकृत न्यायिक प्रणाली की स्थापना की गयी है, जो कि त्रिस्तरीय है–

1. उच्चतम न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय
2. उच्च न्यायालय
3. जिला एवं सत्र न्यायालय

सर्वोच्च न्यायालय –

भारतीय सर्वोच्च न्यायालय अंतिम अपीलीय न्यायालय है। यह भारतीय संविधान का अंतिम व्याख्याता भी है। इसके फैसले सभी अदालतों को मानने होते हैं। यह उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का स्नानांतरण कर सकता है। अपने नीचे के किसी भी अदालत का मुकदमा अपने पास मँगवा सकता है। यह किसी एक उच्च न्यायालय में चल रहे मुकदमें को दूसरे उच्च न्यायालय में भेज सकता है। इसकी स्थापना 28 जनवरी 1950 को किया गया। भारतीय संविधान में भाग–5 (अनु0–124 से 147 तक) में सर्वोच्च न्यायालय का प्रावधान किया गया है। भारत का सर्वोच्च न्यायालय नई दिल्ली में स्थित है। वर्तमान में इसमें एक मुख्य न्यायाधीश एवं 33 अन्य न्यायाधीश हैं। सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य कार्य संविधान की रक्षा करना और विभिन्न न्यायिक विवादों का समाधान करना है। सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है और अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति मुख्य न्यायाधीश के परामर्श पर राष्ट्रपति के द्वारा किया जाता है। सर्वोच्च न्यायालय में नियुक्ति पाने के लिए संविधान में न्यायाधीशों की योग्यता का निर्धारण किया गया है। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को संसद द्वारा निर्धारित वेतन, भत्ते एवं अन्य सुविधाएँ, दी जाती हैं।

भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार–

1. मौलिक अधिकार संरक्षण संबंधी क्षेत्राधिकार ।
2. संघ और राज्यों के बीच तथा विभिन्न राज्यों के आपसी विवादों का निपटारा।
3. अपीलीय क्षेत्राधिकार ।
4. दिवानी, फौजदारी तथा संवैधानिक सवालों से जुड़े अधीनस्थ न्यायालयों के अपील पर सुनवाई करना ।
5. रिट सम्बन्धी क्षेत्राधिकार ।
6. परामर्श या सलाह सम्बन्धी क्षेत्राधिकार ।
7. जनहित के मामलों तथा कानूनी मसले पर राष्ट्रपति को सलाह देना ।
8. कानून के उल्लंधन की रोकथाम। ।
9. संवैधानिक प्रश्नों पर निर्णय ।
10. संविधान का संरक्षक।

उच्च न्यायालय –

उच्च न्यायालय राज्य स्तर पर सर्वोच्च न्यायिक निकाय है। भारतीय संविधान के भाग–6 (अनुच्छेद–214 से 231 तक) में उच्च न्यायालय से संबंधित प्रावधानों का उल्लेख है। सर्वोच्च न्यायालय की भाँति प्रत्येक उच्च न्यायालय भी एक अभिलेख न्यायालय है। उसके पास पूरा प्रारंभिक और अपीलीय क्षेत्राधिकार है तथा अवमानना के लिए, दण्ड देने की शक्ति भी है । (अनुच्छेद– 215)2। वर्तमान में भारत में 25 उच्च न्यायालय है। उच्च न्यायालय सिविल या आपराधिक क्षेत्राधिकार का उपयोग केवल तभी करते हैं, जब राज्य में अधीनस्थ न्यायालय मामलों की कोशिश करने के लिए सक्षम न हो। उच्च न्यायालय निचली अदालतों के फैसलें पर की गई अपील की सुनवाई कर सकता है। राष्ट्रपति द्वारा उच्च न्यायाल के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति की जाती है। अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति मुख्य न्यायाधीश और राज्यपाल के परामर्श द्वारा किया जाता है। उच्च न्यायालय की स्थापना राज्यों के साथ–साथ न्यायिक स्वतंत्रता को सुनिश्चित करने के लिए की गई है। यह रिकार्ड की एक अदालत है और किसी भी अदालत या प्राधिकरण के अधीक्षक के अधीन नहीं है, हालांकि इसके फैसले की अपील सर्वोच्च न्यायालय में हो सकती है। संविधान के अनुच्छेद–226 के तहत सभी उच्च न्यायालय को मौलिक अधिकारों को लागू करने हेतु रीट जारी करने की शक्ति प्राप्त है।3 इस शक्ति के अभ्यास में, उच्च न्यायालय राज्यों को किसी प्रकार भी नागरिकों के साथ अवैध रूप से हस्तक्षेप करने और पहले किये गए या पारित किसी भी नागरिकों के अधिकारों के साथ अवैध रूप से हस्तक्षेप करने और पहले किये गए या पारित किसी भी अधिनियम या आदेश को अमान्य घोषित करने से रोक सकता है।

जिला या सत्र न्यायालय–

जिला न्यायालय भारत के राज्य सरकारों द्वारा जनसंख्या घनत्व के आधार पर हर जिले या जिलों के समूह के लिए स्थापित किये जाते हैं। भारतीय संविधान में अनु0 233 से अनु0 237 तक जिला या सत्र न्यायालय के प्रत्यक्ष प्रशासन के अधीन है और उच्च न्यायालय के निर्णय से बधे हैं। जिला न्यायालय भारत की न्यायिक प्रणाली में निचला और महत्त्वपूर्ण स्तर है। यह जिले के अन्दर आपराधिक और दीवानी मामलों की सुनवाई करता है। जिसकी अध्यक्षता जिला न्यायाधीश करता है। ये अदालतें सीधे लोगों को न्याय प्रदान करती है और राज्य के उच्च न्यायालय के प्रति जवाबदेही होती है।

न्यायपालिका की स्वतंत्रता–

न्यायपालिका की स्वतंत्रता का अर्थ है सरकार के अन्य दो अंग विधायिका और कार्यपालिका, न्यायपालिका के कार्यों में हस्तक्षेप न करके, उनके कार्यों में किसी प्रकार की बाधा न पहुंचाएँ, ताकि वह अपना कार्य सही ढंग से और निष्पक्ष रूप से कर सकें। भारत के न्याय व्यवस्था में न्यायपालिका की स्वतंत्रता एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है जिसमें न्यायपालिका व्यवस्था को राजनीतिक दबाव से मुक्त रखने के कई उपाय किये गए हैं।

न्यायाधीशों की नियुक्ति–

न्यायाधीशों की नियुक्ति और स्थानांतरण से संबंधित कॉलेजियम प्रणाली है जो संसद के किसी अधिनियम या संविधान द्वारा स्थापित न होकर सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के माध्यम से विकसित हुई है। सर्वोच्च न्यायालय के कॉलेजियम की अध्यक्षता सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश द्वारा की जाती है। इसके साथ ही इसमें सर्वोच्च न्यायालय के 4 वरिष्टतम न्यायाधीश शामिल होते हैं। उच्च न्यायालय के कॉलेजियम का नेतृत्व उसके मुख्य न्यायाधीश और उच्च न्यायालय के 4 वरिष्ट न्यायाधीश करते हैं।

न्यायाधीशों की सुरक्षा–

न्यायाधीशों को उनके पद से हटाने के लिए एक कठिन प्रक्रिया निर्धारित की गई है जिससे उन्हें न्यायिक हस्तक्षेप से बचाया जा सके।

न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति–

न्यायिक पुनरावलोक का महत्त्व ऐसे देशों में अधिक है जहाँ पर लिखित संविधान है क्योंकि उन देशों में सीमित सरकार की अवधारणा लागू होती है। संविधान दो सिद्धान्तों में से किसी एक सिद्धान्त पर आधारित हो सकता है प्रथम यह व्यवस्थापिका अर्थात् कानून निर्माण करने वाले अंग की सर्वोच्चता के सिद्धान्त पर और द्वितीय संविधान की सर्वोच्चता के सिद्धान्त पर। भारतीय संविधान अमेरिकी संविधान की सर्वोच्चता के सिद्धान्त को अपनाया है। न्यायिक पुनर्विलोकन का शाब्दिक अर्थ है– न्यायालय द्वारा समीक्षा करना। राजनीतिक एवं संवैधानिक मान्यता की दृष्टि से विधायिका की विधियों तथा कार्यपालिका के कार्यो का आदेशों की संवैधानिकता अथवा असंवैधानिकता का निर्धारण न्यायिक पुनर्विलोकन है। न्यायपालिका का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष संविधान प्रदत्त अधिकार है जिसके अन्तर्गत न्यायपालिका यह निर्धारण करती है कि विधायिका की विधि अथवा कार्यपालिका का अमुक कार्य या आदेश संविधान के अनुरूप है अथवा नहीं।

न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति सर्वोच्च न्यायालय की सर्वाधिक महत्त्वर्पूण शक्ति है। सर्वोच्य न्यायालय के कार्य क्षेत्र की इस व्यापकता को देखकर सर्वोच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश एम0सी0 सीतलवाड ने कहा था कि ''न्यायालय का न्याय क्षेत्र तथा उसकी शक्तियाँ राष्ट्रमंडल के किसी भी देश के सर्वोच्च न्यायालय एवं संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के कार्य क्षेत्र और शक्तियों से भी व्यापक है।''

अनु0–131 और अनु0–132 के अर्न्तगत सर्वोच्च न्यायालय राज्य सरकार द्वारा निर्मित विधियों के पुनर्विलोकन का आधार है। इसी प्रकार अनु0–13 व अनु0–32 मौलिक अधिकार के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय को इसी प्रकार की शक्ति प्रदान करते हैं। अतः यदि संघीय संसद या राज्य विधान मंडल संविधान का अतिक्रमण करते हैं या मौलिक अधिकारों के विरूद्ध विधि निर्माण करते है तो ऐसे विधियों को सर्वोच्च न्यायालय असंवैधानिक घोषित कर सकता है।

जनहित याचिका, न्यायिक सक्रियता और सर्वोच्च न्यायालय–

भारत में जनहित याचिका (PIL) नागरिकों को व्यक्तिगत और आम जनता को प्रभावित करने वाले मुद्दों पर विचार करने का अधिकार देती है। वन्य–जीवों, सतत् विकास और पर्यावरण को बचाने के लिए, न्यायपालिका ने जनहित याचिकाओं का बहुत उपयोग किया है। यह भेदभाव का मुकाबला करना निजता का अधिकार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता जैसी व्यक्तिगत स्वतंत्रता को बचाने में सहायक रहा है। ऐतिहासिक फैसले ने शिक्षा, महिला अधिकारों और समलैंगिकता को अपराध से मुक्त करके सामाजिक परिवर्तन लाया है।

1979 में सर्वोच्च न्यायालय ने सामाजिक कार्यकर्ताओं की शिकायतों पर विचार किया जिसमें न्यायालय का ध्यान कुछ

सामाजिक वर्गों या संस्थाओं की स्थिति पर था, जिन्हें उनके मूल अधिकारों से वंचित रखा गया था। 1979 में हुसैनारा बनाम बिहार राज्य सरकार संबंधी मामला प्रथम जनहित याचिका के रूप में प्रसिद्ध हुआ। 1979 में समाचार पत्रों में प्रकाशित विचाराधीन कैदियों के मामले में छपी खबरें थी। सर्वोच्च न्यायालय ने इस मामले में अपना ऐतिहासिक फैसला सुनाते हए आदेश दिया था कि देश के जेलों में बंद कैदियों को फौरन रिहा किया जाए, जिन्होंने वास्तविक अवधि से अधिक समय की सजा काट लिया हो। क्योंकि यह जनहित याचिकाओं से संबंधित पहला मामला था जिसे श्रीमती हिंगोरानी ने डाला था अतः उन्हें 'जनहित याचिकाओं की जननी' कहा गया।4 इसी प्रकार 'विशाखा बनाम राजस्थान राज्य' का मामला रहा।5 जो महिलाओं के कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न की रोकथाम से संबंधित था। इसके लिए सर्वोच्च न्यायालय ने 'विशाखा दिशा निर्देश' निर्धारित किया। इस प्रकार इस मामले को महिलाओं के अधिकारों की रक्षा का 'पथ–प्रदर्शक' माना जाता है । 'आर0एल0ई0 बनाम भारत संघ' यह भारत में पर्यावरण से संबंधित पहला जनहित याचिका का मामला था।[6] 'परमानंद कटारा बनाम भारत संघ' मामला भी ऐतिहासिक मामला माना जाता है।7 इस मामले में यह सुनिश्चित कर दिया कि अस्पतालों का अंतिम लक्ष्य जीवन बचाना होना चाहिए।

भारत में न्यायिक सक्रियता के सिद्धान्त का प्रादुर्भाव 1970 के दशक के मध्य में आया। न्यायमूर्ति वी0आर0 कृष्णा अय्यर, न्यायमूर्ति पी0एन0 भगवती, न्यायमूर्ति ओ0 चिनप्पा रेड्डी तथा न्यायमूर्ति डी0ए0 देसाई ने देश में न्यायिक सक्रियता की नीव रखा।[8] यही वे न्यायाधीश थे जिन्होंने न्यायिक सक्रियता को बढ़ावा दिया। इन न्यायमूर्तियों ने जनहित याचिकाओं के माध्यम से संसाधन विहीन वर्गों तक न्याय पहुँचाया। अपनी इस शक्ति का प्रयोग कर न्यायालय ने अनेक संसदीय विधियों की समीक्षा की। जब कार्यपालिका अपनी अनेक समस्याओं जैसे वर्षों से कारागारों में बंद कैदियों, नारीगृह में स्त्रियों का शोषण, बच्चों श्रमिकों का शोषण, अवैध बंदीकरण न्याय मिलने में देरी, पुलिस द्वारा अत्याचार आदि का निराकरण करने में अप्रभावी सिद्ध हुई है ऐसे समय में न्यायिक सक्रियता द्वारा न्यायालय अपने नागरिकों के संवैधानिक एवं कानूनी अधिकारों की रक्षा के लिए स्वयं सामने आया। न्यायिक सक्रियता द्वारा त्वरित कार्यवाही कर न्यायालय ने शोषण, उपेक्षित, समुदाय वर्ग व नागरिकों के हित में संज्ञान लिया और उनके कानूनी व संवैधानिक अधिकारों की रक्षा के लिए साथ–साथ सामाजिक, आर्थिक मामलों में भी न्याय प्रदान करने का कार्य किया।

भारत के पूर्व न्यायाधीश पी0एन0 भगवती ने न्यायिक सक्रियता पर अपना विचार प्रकर करते हुए कहा है कि ''जिन व्यवस्थाओं में न्यायिक पुनर्विचार का अधिकार है वहाँ न्यायिक सक्रियता होगी ही। परिवर्तन के वर्तमान दौर में न्यायिक सक्रियता का सामाजिक सक्रियता के रूप में रूपान्तरित होना स्वाभाविक है।9 न्यायिक सक्रिया के संदर्भ में ए0के0 गोपालन बनाम मद्रास मामले10 के निर्णय में जहाँ न्यायपालिका ने विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया का शाब्दिक व्याख्या किया। वही मेनका गांधी वाद11 में तात्विक रूप से व्याख्या किया। शंकरी प्रसाद वाद12 में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जो निर्णय दिया गया उसके द्वारा संसद को संविधान संशोधन करने का मनमाना अधिकार मिल गया।

डैनियल लतीफी मामला (2001)[13] न्यायिक सक्रियता का अच्छा उदाहरण है जहाँ सर्वोच्च न्यायालय की पांच जजों की पीठ ने मुस्लिम महिला (तलाक का अधिकार) अधिनियम की व्याख्या की।

न्याय प्रणाली की चुनौतियाँ–

भारतीय न्याय व्यवस्था कई चुनौतियों का सामना कर रही है–

1. **अधिक संख्या में मामलों का लंबित रहना**– न्यायालय में मामलों की अधिक संख्या और लंबित मामलों की बढ़ती संख्या गभ्भीर समस्या है। इससे न्याय में विलम्ब होता है। नागरिकों को इसके न्यायिक आवश्यकता को पूरा करने में कठिनाई होती है।
2. **वकीलों और न्यायाधीशों की कमी**– न्यायालय में वकीलों और न्यायाधीशों की कमी भी एक चुनौती है। यह मामलों की सुनवाई को प्रभावित करता है और न्याय वितरण की प्रक्रिया को धीमा करता है।
3. **जुर्म और कानूनी मदद**– गरीब और पिछड़े वर्गों के लोगों को कानूनी मदद उपलब्ध नहीं होती। न्यायालयों तक पहुंचने के लिए उन्हें कई बाधाओं का सामना करना पड़ता है।

भारत में न्याय व्यवस्था में सुधार के उपाय–

1. **तेजी से न्याय वितरण**– न्यायालयों में मामलों की संख्या को कम करने के लिए त्वरित सुनवाई और विशेष अदालतों की स्थापना किया जाना आवश्यक है।
2. **कानूनी सहायता**– गरीब और जरूरतमंद लोगों के लि, कानूनी सहायता की सुविधा प्रदान करने की आवश्यकता है जिससे वह न्याय का लाभ उठा सके।
3. **न्याय का डिजिटलीकरण**– न्यायालय के कामकाज को डिजिटलीकरण की प्रक्रिया से सुसंगत बनाने की आवश्यकता है जिससे मामलों की जानकारी आसानी से प्राप्त की जा सके।

निष्कर्ष–

भारतीय न्याय व्यवस्था लोकतंत्रा का एक महत्त्वपूर्ण स्तम्भ है। जो नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा करती है और समाज में न्याय और समानता सुनिश्चित करती है। हालांकि कई चुनौतियाँ भी है जिनका सामना करना आवश्यक है। सुधार के प्रयास से न्याय व्यवस्था को और अधिक मजबूती प्रदान की जा सकती है जिससे नागरिको ं को त्वरित और आभासी न्याय मिल सके। भारतीय न्याय व्यवस्था की सक्षमता और प्रभावशीलता लोकतंत्र की सफलता के लिए महत्त्वपूर्ण है। लोगों को अपने देश के न्याय वितरण प्रणाली में विश्वास होना चाहिए, और यह विश्वास एक शक्तिशाली और स्वतंत्र न्यायिक प्रणाली की स्थापना के माध्यम से ही आश्वस्त किया जा सकता है।

Author's Declaration:

I/We, the author(s)/co-author(s), declare that the entire content, views, analysis, and conclusions of this article are solely my/our own. I/We take full responsibility, individually and collectively, for any errors, omissions, ethical misconduct, copyright violations, plagiarism, defamation, misrepresentation, or any legal consequences arising now or in the future. The publisher, editors, and reviewers shall not be held responsible or liable in any way for any legal, ethical, financial, or reputational claims related to this article. All responsibility rests solely with the author(s)/co-author(s), jointly and severally. I/We further affirm that there is no conflict of interest financial, personal, academic, or professional regarding the subject, findings, or publication of this article.

संदर्भ सूची

1. ए.आई0आर0 1973 एस0सी0 1461, पैरा–371
2. भारतीय संविधान, अनु0–215
3. भारतीय संविधान, अनु0– 226
4. बी0एल0 फड़िया, कुलदीप फाडिया, ''भारतीय शासन एवं राजनीति'', पृ0–379
5. 6ASCC 241, ASCR 404
6. 1997 (2) ASCR 1186
7. 1989 AIR 2039
8. एम0लक्ष्मीकांत, ''भारतीय शासन'', पृ0– 31
9. डॉ0 प्रभात कुमार, ''न्यायपालिका के बहुआयाम'', पृ0– 38
10. AIR 1950, ASC 27
11. AIR 597, SCR (262)
12. AIR 1951, ASC 458
13. डैनियल लतीफी बनाम भारत संघ (2001) 7 एस0सी0 740

Cite this Article

'शिवकुमारी यादव, प्रो0 रूसीराम महानन्दा', "भारतीय न्याय व्यवस्था– वास्तविक स्थिति", Research Vidyapith International Multidisciplinary Journal (RVIMJ), ISSN: 3048-7331 (Online), Volume:2, Issue:10, October 2025.

Journal URL- https://www.researchvidyapith.com/

DOI- 10.70650/rvimj.2025v2i100002

Published Date- 01 October 2025